REVIEW OF RESEARCH

प्रवासी हिन्दी साहित्य : अवधारणा एवं स्वरूप

प्रकाश कुमार

शोधार्थी , स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग , ति. मां. भा. वि. वि., भागलपुर.

ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514
VOLUME - 8 | ISSUE - 8 | MAY - 2019

प्रस्तावना :–

हिन्दी में प्रवासी साहित्य नवयुगीन साहित्यिक विमर्श है। हिन्दी में इसका आरम्भ प्रेमचंद की 'यही मेरी मातृभूमि है' (1908) और शूद्रा (1926) की कहानियों से माना जाता है। इन कहानियों में अमेरिका से लौटे भारतीय प्रवासी तथा मॉरिशस ले जाए गए भारतीय बंधुआ मजदूरों की कहानियाँ है। साहित्य के विशाल वटवृक्ष की अनेक समृद्ध और सशक्त शाखओं में से एक शाखा प्रवासी साहित्य की भी है, जो दिन–प्रतिदिन अपनी रचनाधर्मिता से हिंदी साहित्य को सधन बनाने के साथ–साथ पाठक वर्ग को प्रवास की संस्कृति–संस्कार एवं उस भूभाग से जुड़े लोगों की स्थिति से अवगत कराने का कार्य कर रही है। प्रवासी हिंदी साहित्य, हिन्दी साहित्य में जुड़ती एक नवीन विद्या एंव चेतना है, जो प्रवासियों के मनोविज्ञान से जुड़ी है जो न केवल एक नई विचारधारा है बल्कि एक नई अंतर्दृष्टि भी है, जिसे अपनी जगह बनाने में पर्याप्त समय लगा है।

भारतीय प्रवासियों के अधिकारों की लड़ाई महात्मा गाँधी ने दक्षिण अफ्रीका से आरम्भ किया। हिन्दी साहित्य में मॉरिशस में रचित हिन्दी साहित्य की एक अलग पहचान है। इसके पुरोधाओं में मॉरिशस के अभिमन्यु अनत का नाम सर्वोपरि है। इन्होंने साहित्य की विभिन्न विधाओं कविता, कथा–साहित्य आदि की रचनाओं से प्रवासी साहित्य को समृद्ध किया है। इनका 'लाल पसीना' चर्चित उपन्यास है। इसमें भारतवंशियों की वेदनाओं का मर्मस्पर्शी चित्रण हैं। बंगाल के प्रसिद्ध कवि रवींद्रनाथ टैगोर के ये सुंदर शब्द मानसपटल पर बरबस ही उभर आते है– ''एक वटवृक्ष को जानने के लिए केवल उस मिट्टी को ही जानना काफी नही है जिसमें यह पनपता हैं बल्कि इसकी दूरस्थ अधिभूमि में इसकी बढ़ती विशालता को जानना भी जरूरी है तभी इसकी वास्तविक जिजीविषा को समझ सकते हैं। वटवृक्ष की शीतल छाया भी अपनी जन्मभूमि से बहुत आगे तक जाती है.....भारत परदेशों में भी जी सकता है और बढ़ सकता है..... राजनीति के भारत नहीं, बल्कि आदर्श भारत''[1]

टैगोर ने इस अंतर को राजनीतिक बनाम आदर्श के रूप में पारिभाषित किया है। एक प्रवासी भारतीय अपने राष्ट्र–रूप भारत के प्रति निष्ठावान नहीं हो सकता क्योंकि उसे भारतीय नागरिक नही बनना है। हालांकि उसमें भारत के लिए अपनत्व और आत्मीयता का भाव जरूर पनपता है क्योंकि वह खुद को कहीं न कही अपने पुर्वजों के जन्मस्थान से और भारतीय उपमहाद्वीप की महान सभ्यताओं से जूड़ा हुआ महसूस करता है।

प्रवासी साहित्य की परम्परा बहुत पुरानी नहीं हौ, फिर भी प्रवासी साहित्य अपनी संवेदनात्मक रचनाधर्मिता से साहित्य के क्षेत्र में जड़े जमा चुका हे। भारत से दूर अन्य देशों में बसे भारतीयों के अथक प्रयासों से आज प्रवासी समृद्ध और सशक्त बन पाया है। प्रवास शब्द उन लोगों के लिए प्रयुक्त हुआ है जो शौक या मजबूरी वश दूर देशों में बसा दिये गये थे, या वे स्वयं रोजगार की तलाश में अन्य देशों की यात्रा पर निकल गये और वही बस गए। इन लोगो ने अपने परिश्रम से वहाँ की आबादी में अपनी उपस्थिति दर्ज कराई और अपनी आवश्यकताओं

की पूर्ति के लिए स्वयं को सक्षम बनाया। इस सक्षमता से पहले प्रवासियों को अनेक बाधाओं का सामना करना पड़ा है। ये लोग गुलाम के रूप में वहाँ ले जाये गये थे, इसलिए इन्हें आर्थिक संकटों के साथ–साथ अपनी धरती, अपने घर–परिवार से दूरी, शारीरिक और मानसिक गुलामी और लोगों का बेगानापन झेलना पड़ा है। उन्ही में से कुछ लोगों ने अपनी व्यथा – कथा को कलभबद्ध कर प्रवासी हिन्दी साहित्य की नींव रखने का कार्य किया। ''प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन के अवसर परमॉरीशस के कलाकारों द्वारा प्रस्तुत 'अंधा युग' नाटक एक बड़ी उपलब्धि मानी जाती है। मोहन महर्षि द्वारा निर्देशित नाटक ष्अंधा युगष् के दो प्रदर्शन हुए थे। प्रथम प्रदर्शन धनवटे रंगमंदिर, नागपुर के सम्मेलन में भाग लेने वाले प्रतिनिधियों और गणमान्य अतिथियों के लिए आयोजित किया गया था। दिवस के सत्रों के बाद शाम का नाट्य–प्रदर्शन देखने के लिए हॉल दर्शको से खचाखच भर गया।''[2]

कुछ वर्षो बाद प्रवासियों का साहित्य के क्षेत्र में दखल बढ़ गया। अगले पड़ाव के साहित्यकार और प्रवासी वे लोग थे जो स्वेच्छा से प्रवास कर रहे थे। जिनकी आर्थिक स्थिति अच्छी थी और जो बंधुआ मजदूर के संताप और प्रलाप को छोड़ मानसिक रूप से स्वयं को स्थापित करने की मनोदशा बना चुके थे। पहले गए प्रवासियों से इनकी सोच, कार्य और व्यवहार भिन्न थे। इन्होंने अपनी अभिव्यक्ति के लिए एवं उसे सुरक्षित रखने के लिए रचनाकर्म का सहारा लिया। वहाँ की परिस्थितियों को देखकर मानसिक स्तर पर चेतन और सजग इन लोगों ने अपने संताप को अपनी साहित्यिक रचनाओं में अभिव्यक्त किया। इनमें से बहुत से लोग भारत में रहते हुए अपनी साहित्यिक गतिविधियों के लिए प्रसिद्ध थे, और जो केवल स्वान्तः सुखाय लिखते थे वे प्रवास की समस्याओं और संवेदनाओं से सहज ही जुड़ गये और अपनी रचनाओं द्वारा प्रवासी साहित्य के पुरोधा बनकर उभरे।

''अपने भाषा में एक बात बोली,
तेहसे हम्मे बहुत है प्यार,
महतारी भाषा हभार''[3]

साहित्य उसी भाषा में लिखा जाता है जिस भाषा के संस्कार व्यक्ति को बचपन से मिलते है। यदि साहित्य की अभिव्यक्ति विदेशी भाषा में की जाए तो ऐसा साहित्य संवेदनशील नहीं होगा। विदेशों में बैठे हिन्दी साहित्यकार ने अपने लेखन का माध्यम हिंदी चुना, क्योंकि इसके माध्यम से वह अपने पीछे छूट चुके देश के आंतरिक संबंध को बनाए रखना चाहते है। प्रवासी लेखक प्रवास के दुख–दर्द की संवेदनाओं के साथ अपने देश में संस्कारों को जोड़कर उनमें व्याप्त विषमताओं को कागज पर उतार देता है और यह संवेदनाएँ सहज ही सबसे जुड़ सबकी संवेदनाएँ ये बन जाती हैं।

''फीजी में माता–पिता अपने बच्चों को हिंदी इसलिए नही पढ़ाते कि इसमें रोजगार की संभावनाएँ है, बल्कि इसलिए कि उनकी संस्कृति सुरक्षित रहे।''[4]

आज फीजी की युवा पीढ़ी में यह सवाल उठने लग गया है कि हिन्दी को लेकर उनका यविष्य क्या है? फीजी में रोजगार के सीमित अवसर और भविष्य में अवसरों की कमी उन्हें यह सोचने पर मजबूर कर देती है। ''इसी कारण आज फीजी का युवा हिंदी बोलने तक ही अपने को सीमित करता जा रहा है और हिंदी बोल चाल की हिंदी तक सिकुड़ती जा रही है। ये कुछ चुनौतियाँ है, जिनसे फीजी के समाज, शिक्षा जगत् और सरकार को निबटना है।''[5]

अपनी इन्हीं संवेदनाओं के प्रयास को प्रवासी साहित्यकारों ने जारी रखा और साहित्य की इस परम्परा को आगे बढ़ाने में अपना सहयोग दिया , उसी का प्रतिफल आज हमारे सामने है कि हम प्रवासियों की जिंदगी से सहज ही जुड़ कर उनके प्रवास के अनुभवों को साझा कर रहे हैं। वर्तमान प्रवासी लेखकों से ये अपेक्षाएँ की जा रही है कि वह समन्वय की रीति से कार्य करें और देश दुनिया के समस्त संकटों से उबर कर साहित्य में समन्वयात्मक दृष्टिकोण स्थापित करें।

''लेखक संस्कृतियों को निकट लाकर समन्वयवादी प्रवृतियों को प्रोत्साहन दे सकता है। आर्थिक जगत में वैश्वीकरण की धारणा जिस प्रकार फलीभूत हो रही है और विश्व गाँव का स्वप्न देखा जा रहा है। सूचना क्रांति इस स्वप्न को साकार करती दिखाई पड़ रही है, साहित्य जगत भी विश्व में इस प्रकार का नैकट्य लाया

जा सकता है। समन्वय सदा से साहित्य का सर्वोत्कृष्ट गुण रहा है। आज से लगभग चार सौ वर्ष पूर्व भक्तिकाल के शिरोभणि गोस्वामी तुलसीदास ने वर्ग वर्ग में बटे समाज सम्प्रदायों और विचार धाराओं कों समन्वित करने का युग परिवर्तनकारी कार्य किया था। अपनी इस विशिष्टता के कारण ही 'रामचरितमानस' एक सर्वकालीन और सार्वजनिक ग्रंथ बन गया है। आधुनिक युग कें महान घुमक्कड़ और विराट व्यक्तित्व के धनी साहित्यकार राहुल सांकृत्यायन ने देश–विदेश के अगम्य क्षेत्रों का न केवल अन्वेंषण किया अपितु गंगा और बोलगा नदियों पर अपनी दार्शनिक दृष्टि से समन्वयकारी विचारधारा को संतुष्ट किया है। आज प्रवासी हिंदी साहित्य से जुड़ी सबसे बड़ी अपेक्षा समन्वय की है।''[6]

वर्तमान में रचे जा रहे साहित्य में प्रवासी लेखक अपने देश के साथ–साथ संपूर्ण विश्व में अपने जुड़ाव को अभिव्यक्त कर रहे हैं। भारतीय प्रवासी लेखक भावनात्मक रूप से भारत से जुड़े हुए है यही कारण है कि उनके साहित्य में प्रवासी भूमि के साथ ही अपने देश के प्रति प्रेम की भावना भी देखने को मिलती है। वस्तुतः आज के प्रवासी साहित्य की संपूर्ण दृष्टि भारत के रंग से रंगी हुई है। इनके साहित्य में आधुनिक दौड़ और मानसिक द्वंद्व का यथार्थ रूप देखने को मिलता है। यही विभेदन – दृष्टि प्रवासियों के साहित्य को नवीनता प्रदान करती है।

हिन्दी लेखक प्रायः वे है जो धनार्जन व शिक्षा के लिए इन देशों में गए थे। वे अमेरिका में रहते हुए न तो अमेरिकी संस्कृति के अंग बन पाए न शुद्ध रूप से भारतीय ही रह पाए। इन भारत वंशी परिवारों की नई पीढ़ी तो भारतीय होने की अपेक्षा अमेरिकी बनने के लिए लालायित हो गई, जिसमे इन भारत वंशी परिवारों की पुरानी पीढ़ियों में अपनी जड़ों को लौटने की आकांक्षा उत्पन्न हुई। अमेरिकी और यूरोप के हिंदी साहित्य की यह विशेषता है कि वह अपनी जड़ों की, अपनी अस्मिता की तथा अपनी भारतीय पहचान को अभिव्यक्त करता है।

''इन देशों में भारतवंशी लेखक अंग्रेजी में भी लिख रहे हैं कुछ को तो विश्व में ख्याति और धन भी मिला हैं, भारतवंशी अंग्रजी लेखक स्वयं को 'भारत में पैदा हुए अमेरिकी लेखक' मानते है और कैथरिन मेयों की 'मदर इंडिया' पुस्तक की तरह भारत का कलियापूर्ण चित्र ही प्रस्तुत करते हैं। अमेरिका, इंगलैंड आदि देशों के भारतवंशी हिंदी लेखक स्वयं को भारतीय संस्कृति को मजबूत आधार देते है।''[7]

प्रवासी साहित्य की रचना के कारण चाहे जो भी रहे हो, उनमें चित्रित परिस्थितियाँ चाहे जैसी भी रही हो, किंतु आज का सत्य यह है कि प्रवासी हिन्दी साहित्य, भारतीय हिन्दी साहित्य का अभिन्न अंग बन गया हैं। प्रवास की समस्याओं और संघर्षो की वास्तविकताओं से भरा यह साहित्य हमें मानव के जुझारू होने की सीख देने के साथ ही सदैव प्रयत्नशील होने की सीख देता है। ''हिन्दी के प्रवासी साहित्य ने अपना एक संसार रचा, जो चाहे छोटा ही था, परंतु उसने एक अलग साहित्य संसार की रचना की जो पूरे विश्व में निरंतर फैलता गया और हिन्दी के प्रवासी साहित्य का एक बिम्ब निर्मित हुआ। अब वह मॉरिशस तक सीमित न था, उसका परिदृश्य वैश्विक बन गया। उसकी संरचना में कई शक्तियाँ काम करती रही। विश्व के कई देशों में विश्व हिन्दी सम्मेलन हुए। भारत के हिन्दी लेखकों एवं प्रवासी हिन्दी लेखकों का भारत में सम्मान होने लगा। देश की साहित्यिक अकादमियों ने प्रवासी हिंदी साहित्य पर गोष्ठियाँ की, प्रवासी भारतीय दिवस तथा डास्पोरा आरम्भ किया। प्रवासी लेखकों की कृतियाँ भारत में छपती रही, उन पर चर्चाएँ हुई और हिन्दी विश्व में प्रवासी हिन्दी साहित्य की प्रतिष्ठा बढ़ी हिन्दी कों मुख्यधारा में उचित स्थान देने की माँगें उठने लगी। हिन्दी साहित्य का उपर्युक्त प्रयास श्लाध्य है।''8

आज स्थिति यह है कि मॉरिशस, अमेरिका एवं इंग्लैंड तीन ऐसे प्रमुख देश है जहाँ प्रवासी भारतीयों की संख्या सार्वधिक है और सम्भवतः इस कारण इन देशों में हिन्दी लेखकों की संख्या भी सबसे अधिक है। इन प्रवासी लेखकों में अनेक ऐसे लेखक हैं जिनकी भारत ही नही अपितु विश्व हिंदी मंच पर प्रतिष्ठा है और जिनके पाठकों की संख्या किसी भी लोकप्रिय हिन्दी लेखक से कम नही हैं।

''आज अमेरिका में हिंदी के प्रति प्रवासी भारतीयों में एक विशेष प्रेम दिखाई पड़ता है जो 60 और 70 के दशक में नही था।''[9] उस काल में आए भारतीय लोगों को लगता था कि हिंदी का उनके दैनिक और प्रोफेशनल जीवन में कोई उपयोग नही है। फिर उस समय का भारत भी आर्थिक दृष्टि से इतना कमजोर था कि अधिकतर अप्रवासी भारतीय अमेरिका की सुख सुविधाएं छोड़ भारत लौटना की कल्पना नहीं चाहते थे। 1980 के दशक में अमेरिका में हिंदी ने करवट बदली। अमेरिका के कालेजों और विश्वविद्यालयों में 60 और 70 के दशक में आए अप्रवासी भारतीयों के अनेक बच्चे हिंदी सीखने के लिए हिंदी की कक्षाओं में दाखिला कराने लगे।

''1990 के दशक के बाद भारतीयों का हिंदी के प्रति उत्साह कई कारणों से यकीनन बढ़ा है। एक तो अब भारतीयों का भारत से और उसकी भाषाओं से इंटरनेट, व्हाट्सऐप और सस्ते फोन के कारण नाता गहरा हो गया।''[10] भारत में पिछले कुछ सालों में हिंदी के समाचारपत्रों और टीवी चैनलों में खासी वृद्धि हुई है। अंग्रेजी के कार्यक्रमों में अब पत्रकार को भी मोदी और केजरीवाल जैसे लोगों से हिंदी में ही प्रश्न पूछने पड़ते है। तीसरा कारण है कि अब भारतीय नेता अमेरिका के टाइम्स स्क्वेयर में खड़े होकर हिंदी में सार्वजनिक भाषण देने में गर्व अनुभव करते है, शरमाते नही। ''अब तो अमेरिका के राष्टपति ओबामा भी अपनी भारत यात्रा के दौरान अपने भाषणों में कुछ हिंदी के वाक्यांश बोलने का प्रयास करते है, जैसे मेरा प्यार भरा नमस्कार।''[11] चौथा कारण है कि अमेरिका के अहिंदी–भाषी भारतीय मूल के अप्रवासी भी हिंदी को अपनी पहचान का महत्वपूर्ण हिस्सा समझते है। न्यूजर्सी के एक जाने माने भारतीय मूल के भूतपूर्व एसेम्बली मैन अपनी दक्षिण भारतीय हिंदी में भाषण देते हुए बड़े गर्व से कहते है कि अमेरिका में हमारी भारतीय पहचान की भाषा हिंदी है, भले ही हमारे घर की भाषा गुजराती या तेलगु हो। ''न्यूयॉर्क में आयोजित आठवें विश्व हिंदी सम्मेलन (जुलाई, 2007) में संयुक्त राष्ट्रसंघ के महासचिव महामहिन बान की मून ने, जो कोरियाई है, अपने भाषण में हिंदी के उपयोग और हिंदी की महत्ता को रेखांकित करके दक्षिण कोरिया में हिंदी एवं भारत प्रेम की ही स्थापना की है।''[12]

प्रवासी हिन्दी साहित्य लेखन की यह परम्परा दीर्घकाल तक यथावत बनी रहें। ताकि आने वाले समय की नई भारतीय पीढ़ी को प्रवास से संदर्भित सारी जानकारी सहज ही मिलती रहें। प्रवासी लेखक, अपने लेखन की परम्परा को इसी प्रकार निभाते रहे और भारतवंशी होने के गर्व को सदा अपनी लेखनी से उद्वेलित करते रहे, ऐसा कर प्रवासी साहित्यकार स्वयं को सहज परिभाषित कर सकेंगे।

संदर्भ–सूची :

1. प्रवासी भारतीयों में हिन्दी की कहानी, सुरेन्द्र गंभीर पृ0 – 61, प्रकाशन भारतीय ज्ञानपीठ, संस्करण – 2017
2. विश्व हिन्दी पत्रिका – 2010, संपादक – गंगाधर सिंह सुखलाल पृ0 – 183
3. प्रवासी भारतीयों में हिन्दी की कहानी, सुरेन्द्र गंभीर, प्रकाशन भारतीय ज्ञानपीठ, संस्करण – 2017, पृ0 – 78,
4. विश्व हिन्दी पत्रिका 2010, संपादक –गंगाधर सिंह सुखलाल पृ0 – 29
5. वही
6. वर्तमान साहित्य, संपादक – कुंवरपाल सिंह, नमिता सिंह, प्रवासी हिन्दी लेखन तथा भारतीय हिन्दी लेखन, उषा राजे सक्सेना (जनवरी, फरवरी 2006) पृ0 – 62
7. हिन्दी का प्रवासी साहित्य, डॉ कमल किशोर गोयनका, पृ0 – 47, प्रकाशन अमित संस्करण, गाजियाबाद – 2011
8. वही, पृ0 – 50
9. प्रवासी भारतीयों में हिन्दी की कहानी, सुरेन्द्र गंभीर, प्रकाशन भारतीय ज्ञानपीठ, संस्करण – 2017, पृ0 158
10. वही, पृ0 – 159
11. वही
12. विश्व हिन्दी पत्रिका 2010, संपादक – गंगाधर सिंह सुखलाल पृ0 – 48